अध्याय चौवनवाँ

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नमः॥

"जो ज्ञान से परिपूर्ण हैं वे स्वयं के शिष्य रूपी चातक पर ज्ञानानंद की वर्षा करते हैं; सभी जीवात्माएँ त्रिगुणों में बंधे जाने के कारण एक दूसरे से किस प्रकार व्यवहार करते हैं, ये सतगुरुजी देखते रहते हैं तथा जो सांसारिक कष्टों से पीड़ित होता है, उसे वे सद्‌गुण प्रदान करते हैं, जिससे वह सुखरुप होता है। ऐसे सतगुरुजी के चरणों में माथा रखकर मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।"

श्रीसिद्धारूढ़ महाराज ने केवल स्वयं के अस्तित्व से भक्तों को उद्धरने के लिए, हुबली में अवतरित होकर लीलया कार्य किया था; उनका नाम जपने से जीवात्मा कालपुरुष पर भी मात करता है तथा स्वयं एक जीवात्मा है यह भूलकर ब्रह्मावस्था (परम अवस्था) में रहकर सुख प्राप्त करता है। प्रतिदिन सतगुरुजी का नामस्मरण करके प्रेम पूर्वक उनका गुणगान करने से, दयाघन सतगुरुनाथ भवरोग (यानी सांसारिक दुख तथा पीड़ा) का निवारण करते हैं। सचमुच, इससे श्रेष्ठ उपासना है ही नहीं, जिससे चैतन्य घन परमात्मा स्वयं प्रकट होकर भक्तों को तारता है। सभी उपासनाओं में भक्ति श्रेष्ठ है, ऐसा पुराण कथा में बताया गया है; वेदों में भी भक्ति की महिमा का बयान किया गया है। इतना ही नहीं, संतों ने भी भक्ति मार्ग का बयान किया है। सचमुच, इससे उत्तम साधना कोई भी नहीं है। भक्ति से प्राप्त होने वाला सुख, यह सब से उत्तम सुख होकर भक्ति करना सब से आसान है; जो हमेशा आनंद देने वाला होता है, ऐसा सद्‌ भक्तों का संग, सत्संगों में श्रेष्ठ है। ऐसे सत्संग के सुख की आहट भी हो जाए, तो दुख दूर भाग जाता है तथा सारे कष्टों का निवारण होकर जीवात्मा को अलौकिक आनंद प्राप्त होता है। श्रोतागण, जिसे सुनने से हृदय पावन होकर निःसंदेह चारो ओर आनंद फैल जाता है, ऐसा सिद्धारूढ़जी का जीवन चरित्र सुनिए।

एकबार सिद्धारूढ़जी ने तीसरे प्रहर सभी शिष्यों को अपने पास बुलाया और कहा, "हे शिष्यों, अब आप सभी मिलकर पश्चिम दिशा में होने वाले पहाड़ की ओर निकल पड़िए। सभी भक्तों के लिए पर्याप्त हो, इतनी रोटियाँ (भाकरी) तथा एक पात्र में दाल (मराठी में जिसे 'आमटी' कहते है) लेकर सब लोग मेरे

साथ चलिए।" उनकी आज्ञानुसार शिष्यों ने भोजन की सिद्धता की; उसपर अपने आत्मीय पच्चीस आज्ञाकारी शिष्यों को साथ लेकर सतगुरुजी निकले। सतगुरु जी का भजन गाते हुए दो घटिकाएँ चलने के उपरांत वे सभी एक पहाड़ के तल तक पहुँचे। उसके पश्चात सभी भक्त पत्थर, कंकरों से भरा पहाड़ चढ़ जाने के बाद सामान्य रूप से एक समतल स्थान देखकर, वहाँ सतगुरुजी की जयजयकार करते हुए बैठ गए। सभी शिष्यों ने मिलकर सतगुरुजी को एक ऊँचे पत्थर पर बिठाया। उसपर भक्तगणों ने मिलकर उनकी पूजा आरंभ की। वहीं पर स्थित पेड़, लताओं के फूल तथा पत्ते तोड़कर उन्होंने एक मनोहर वनमाला तैयार की और पत्थर के सिंहासन पर बैठे हुए सतगुरुजी के गले में डालकर उन्हें सजाया। उसके पश्चात सारे शिष्यों ने मिलकर सतगुरुजी के सामने फेरे में नृत्य करते हुए भजन गाए। इस प्रकार भजन के कोलाहल में चार घटिकाएँ सभी भक्तों ने आनंदित होकर नृत्य किया, उस समय सतगुरुजी का चेहरा आनंद से प्रकाशित हो उठा था। उसपर सभी भक्तगण थके हुए देखकर सतगुरुजी ने उन्हें बुलाया और वे सभी मिलकर मधुर वार्तालाप में तल्लीन हो गए। भक्तों ने रोटियाँ और दाल लायी और एक बड़े पत्थर के गढ़े में रोटी के टुकड़े तथा दाल मिलाकर इकट्ठा सान लिया। इस प्रकार बनाया हुआ मिश्रण सतगुरुजी ने अपने हाथ में लेकर हर एक के मुँह में एक एक निवाला खिलाया, सतगुरुजी के हाथ से प्रसाद प्राप्त करके भक्तगण अत्यंत हर्षित हुए। उसपर गुरु तथा शिष्यगण उस गढ़े के इर्दगिर्द बैठे और उन्होंने बड़े आनंद से भोजन शुरु किया। एक दूसरे को निवाला खिलाने लगा। मानो सभी भक्तों के शरीर एक ही हो, इस प्रकार की एकरूपता की भावना से चलने वाला भोजन का समारोह देखने के लिए प्रत्यक्ष देवदेवताएँ वायुयान में बैठकर आए। सभी देवताओं की अंतरिक्ष में भीड़ हुई थी। सभी की आँखें सतगुरुजी पर टिकी हुई थी, चारो ओर आनंद ही आनंद फैला था। देवदेवताएँ मन ही मन उदास हुए थे और कह रहे थे, "हे सतगुरु महाराज, भोजन का मिश्रण बनाकर उसके निवाले आप पृथ्वी पर स्थित जीवात्माओं को देकर उन्हें पार लगा रहे हैं, परंतु हम हमारे कर्मों के बंधन के कारण व्यर्थ ही इस स्वर्ग में अटके पड़े हैं। अगर हम मनुष्य होते तो हम भी सिद्धारूढ़जी के हाथ का अमृत प्रतिदिन नियमित रूप से स्वीकारते। हमें मिलने वाला अमृत

केवल नाममात्र का ही है! क्योंकि उसे सेवन करने के बावजूद भी पतन होकर कब मृत्युलोक लौटना पड़ेगा, ये कह नहीं सकते, परंतु सतगुरुजी के हाथ का अमृत सेवन करने से वह जन्म-मृत्यु के फेरे से बचाता है।"

उसी समय भगवान श्रीशिवजी तथा देवी पार्वती नंदी पर सवार होकर अंतरिक्ष के मार्ग से जाते समय, देवदेवताओं की भीड़ देखकर पार्वती को बड़ा आश्चर्य हुआ। देवी पार्वती ने शिवजी से कहा, "हे भोलेनाथ, किस लिए यहाँ देवदेवताओं की भीड़ हुई है? मृत्युलोक में ऐसा कौन सा अचरज हुआ है, जिसे सभी देवदेवताएँ वायुयान में सवार होकर देख रहे हैं?" उसपर शिवजी ने कहा, "देवी, चलिए और उस अचरज को हम प्रत्यक्ष रूप से देखेंगे।" अंतरिक्ष से दोनों ने देखा तो शिष्यों के समेत सिद्धनाथजी भोजन कर रहे थे। वह अद्‌भुत भोजन बंटन तथा सेवन का दृश्य देखकर आनंदित हुई पार्वती ने ईश्वर से कहा, "हे शूलपाणी! यह सिद्ध मुनि कौन हैं?" शिवजी ने पार्वती से कहा, "सिद्धारूढ़ यह मेरा ही अवतार है। पृथ्वी पर चारो ओर पाप फैला हुआ देखकर एकबार सभी देवदेवताएँ मेरे पास आए और प्रार्थना करके बोले, 'हे महादेव, पृथ्वी पर अपरिमित पाप फैला है। इस कलियुग में असंख्य लोग दुख, कष्टों से पीड़ित हो गए हैं, इसीलिए आप पृथ्वी पर अवतार धारण कीजिए। वह अवतार, पाप करने से लोगों को रोककर उनका उद्धार करने वाला, दुर्जनों का विनाश न करते हुए उनके मन में पाप करने की प्रवृत्ति को स्थान न देने वाला होना चाहिए। वह अवतार मूर्तिमान करुणा हो, वह दुष्टों से अधिक प्रेम करें क्योंकि दुष्ट पार लग जाएँ तो सभी पार लग जाते हैं, इस प्रकार का वह अवतार हो। वह भक्ति की शक्ति से सभी का उद्धार करें, ज्ञान की शक्ति से लोगों को मोक्ष धाम ले जाए तथा दुष्टों पर शांति के सिवाय दूसरा शस्त्र न उठाएँ। इसके पूर्व हुए सभी अवतारों में दुष्टों का विनाश किया जाने के कारण, उन्होंने पृथ्वी पर बार बार जन्म लिया, जिससे आप का उद्धार कार्य अधूरा ही रह गया। इस से आगे ऐसा न हो, दुष्टों की रक्षा करके उनके दुर्गुणों का विनाश करें, जिससे पाप का जड़ से विनाश होकर सभी का उद्धार होगा।' हे सती, देवदेवताओं के शब्द सुनकर मैंने उन्हें कहा, 'हे देवताओं, आप की यह सूचना मुझे कष्टकारक लग रही है। इस प्रकार का अवतार मैंने इस से पूर्व कभी भी धारण नहीं किया; दुष्टों को

विनाश किए बिना उन्हें किस प्रकार पार लगाया जाए, यह मुझे सूझ नहीं रहा है, इसलिए मुझे उस पर विचार करना होगा।' ऐसा कहकर मैंने देवदेवताओं को भेज दिया। उसके उपरांत बहुत दिन सोचकर मैंने एक विशेष अवतार धारण किया। उसी समय, मैंने देवदेवताओं को, मेरे भक्तों के रूप में पृथ्वी पर अवतार धारण करके मेरी मदद करने के लिए कहा। इस प्रकार, मैंने श्रीसिद्धारूढ़ के नाम से पृथ्वी पर अवतार धारण किया और सभी देवदेवताएँ मेरे अपार भक्तगण हुए। इस अवतार में मैंने एक भी दुष्ट को न मारकर, शांति के एक अलग शस्त्र का उपयोग करके दुष्टों की दुष्टता का विनाश करके उनका उद्धार किया। जो साधना (उपासना) पूर्ण करके ही मेरे पास आए, उन्हें मैंने सर्व श्रेष्ठ आत्मज्ञान प्रदान किया, जिससे वे मेरे समान हो गए। मेरा अवतार समाप्त होने के पश्चात भी ऐसे ज्ञानी मनुष्य, मैंने पृथ्वी पर आरंभ किया हुआ कार्य जारी रखेंगे और अज्ञानी लोगों को दुखदायक संसार से पार लगाएँगे।" पति के ये शब्द सुनकर देवी पार्वती मन ही मन आनंदित हुई, उस पर वे दोनो नंदी पर सवार होकर कैलास की ओर चले गए।

इधर सिद्धारूढ़जी भोजन का मिश्रण बनाने का तथा भक्तगण एक दूसरे को निवाले खिलाने का मनोहर दृश्य देवदेवताएँ वायुयान से देख ही रहे थे। उस समय, जिसके सारे शरीर पर व्रण हैं, ऐसा भटकता हुआ एक कुष्ठि वहाँ आकर सिद्धनाथजी के चरणों में गिर पड़ा। उसने कहा, "हे सिद्धनाथजी, मुझ जैसे दीन मनुष्य पर दया कीजिए। मेरा सारा जन्म व्यर्थ ही हो गया है, तो फिर अब मैं क्यों जिन्दा रहूँ? अगर मैं आप के चरणों पर माथा रखकर प्राण त्याग दूँ, तो आप की कृपा से सचमुच ही धन्य हो जाऊँगा। पूरे समाज ने जिसे बहिष्कृत किया हो, उसे जीवन किस लिए? अंत:काल के समय आप के चरणों में शरण आए हुए मुझ जैसे दीन को कम से कम आप तो स्वीकार कीजिए।" उसे देखकर सभी शिष्यों ने कहा, "अरे भाई! सतगुरुजी से जरा दूर ही रहो, उनके चरणों को स्पर्श मत करो।" यह सुनकर सतगुरुजी ने शिष्यों को रोका; तब कुष्ठि ने कहा, "रहने दीजिए स्वामीजी, उन्हें जो कुछ कहना है, कहने दीजिए!" उस पर शिष्योंने सतगुरुजी से पूछा, "हे सतगुरुजी, कौन सा कर्म करने से इस प्रकार का भीषण रोग जीवात्मा को प्राप्त होता है, यह हमें विस्तार पूर्वक बताइए।"

सतगुरुजी कहने लगे और सभी शिष्य एकाग्र मन से सुनने लगे, "स्थूल तथा सूक्ष्म ऐसे कुष्ठ के दो भाव होते हैं, स्थूल रोग स्थूल शरीर को बाधित करत है। उसके लक्षण देखने हो, तो इस की ओर देखो। इस रोग से यह क्यों ग्रस्त हुआ है, उसके कारण मैं आप को बयान करता हूँ। जो दूसरे की पत्नी से यौन संबंध बनाए रखता है, जो दूसरों को धोखा देकर धन प्राप्त करता है तथा जो सतगुरुजी की निंदा करता है, वह इस प्रकार के स्थूल कुष्ठ से बाधित होता है। माता तथा गुरु पत्नी से यौन संबंध बनाए रखना और निरपराधी लोगों को मार डालने जैसा भीषण कार्य तथा अनैतिक दोषों के कारण इस प्रकार का भयंकर कुष्ठ होता है। जो अपने माता पिता के प्रति मन में अत्यंत व्देष भावना रखता है, ऐसा दुर्गुणी पुत्र अगले जन्म में निश्चित ही कुष्ठि होता है। जो शैव विष्णु निंदा करता है तथा जो वैष्णव शिव निंदा करता है, वह आजन्म कुष्ठि होता है, यह समझ लीजिए। इसके अलावा भी अनेक प्रकार के पाप हैं, जिनके कारण कुष्ठ होता है, अब और मैं आप को क्या बताऊँ! आप ही उन्हें स्वयं समझ लीजिए। सूक्ष्म शरीर को सूक्ष्म कुष्ठ होता है; जिसके लक्षण स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं पड़ते। सब से अपवित्र होने वाले इस रोग से बुद्धि नष्ट होती है। ऐसा रोगी दूसरों से ईर्ष्या करता है। वह दिनरात अंदर ही अंदर क्रोध में जलता रहता है, तथा हमेशा दूसरों की निंदा तथा व्देष करता रहता है। हमेशा दूसरों को धोखा देने के बारे में सोचता रहता है, ये लक्षण सूक्ष्म कुष्ठ के होकर वे लिंगदेह (सूक्ष्म शरीर) में दिखाई पड़ते हैं। ऊपर विवरण किए पापों की प्रवृत्ति जीवात्मा में संस्कारों के रूप में होने के कारण, उसके आवरण से जीवात्मा की बुद्धि बहुत अनिवार दुख देती है। इस प्रकार के इन दोनों कुष्ठों में कोई दवा या चिकित्सा बिलकुल काम नहीं आती। केवल सत्संग और गुरु सेवा से ही ये रोग अवश्य नष्ट होते हैं।" सतगुरुजी का यह भाषण सुनकर सभी शिष्य आनंदित हुए। उसके उपरांत सिद्धजी ने भोजन का वह अमृततुल्य मिश्रण अपने हाथ में लेकर उसका निवाला उस कुष्ठि के मुख में डाला तथा नामस्मरण किया। रोगी ने प्रसाद सेवन करते ही उसका शरीर शांत तथा शीतल हुआ और देखते देखते उसके शरीर पर होने वाले सारे व्रण नष्ट हो गए। उसका कुष्ठ पूर्ण रूप से नष्ट होकर शरीर पूर्णत: शुद्ध हुआ।

अपने शरीर पर अल्प भी कुष्ठ नहीं है, यह देखकर आनंदित होकर गुरुदेव की स्तुति करते हुए उसने कहा, "हे देवाधिदेव, सतगुरुनाथजी, दीनों को तारने वाले दयानिधि, मेरा जन्म सार्थ हुआ है, इसलिए मैं आप को प्रणाम करता हूँ। रोग मुक्त किया हुआ ये मेरा शरीर मैं आप के चरणों पर अर्पण कर रहा हूँ। हे करुणाकर, आप मुझे आजन्म आप की सेवा करने का मौका दीजिए, यही मेरी आप से बिनती है।" बोलते बोलते गुरु प्रेम बेकाबू होकर उसकी आँखों से अविरत अश्रुधाराएँ बह रही थी। ऐसी स्थिति में उसने सतगुरुजी को साष्टांग प्रणाम किया। सतगुरुजी ने उसे उठाया और कहा, "तुम्हारा शरीर मेरा ही है, ऐसा समझ लो, परंतु मुझ में तुम्हारा मन लीन कर के, इस शरीर की रक्षा करते जाओ। हमेशा नामस्मरण करते जाओ। सारे प्राणियों पर दया दिखाना, प्रतिदिन सतगुरुजी के दर्शन करना, ऐसा करने से तुम्हें फिर से कुष्ठ नहीं होगा।" यह अद्‌भुत चमत्कार देखकर देवों ने सतगुरुजी पर फूल बरसाए, चारो ओर ढोल तथा ताशों का निनाद गूँज उठा। उसके उपरांत सभी देवदेवताएँ अपने अपने स्थान लौट गए; इधर सतगुरुजी ने सभी शिष्यों के साथ मिलकर भोजन समाप्त किया। शिष्यों ने कहा, "महाराज, हमें बहुत प्यास लगी है, इधर आसपास कोई भी तालाब या सरोवर नहीं है, तो अब हम क्या करें?" तब दयालु सतगुरुजी उन्हें पास होने वाले एक स्थान ले गए और शिष्यों से कहा, "यह देखिए, यहाँ जल है जरूर, परंतु इस जल में कीड़े हैं, तब आप सब लोग कीडें छोड़कर पानी पी लीजिए, बस।" सभी शिष्यों ने देखा तो पानी में कीड़ों की भरमार थी, उसे देखकर एक भी शिष्य पानी पिने के लिए आगे नहीं बढ़ा। तब सतगुरुजी ने कहा, "ठीक है, सब से पहले मैं ही यह पानी पी लेता हूँ।" ऐसा कहकर सतगुरुजी ने पानी को मुँह लगाकर चखते ही, एक ही पल में पानी निर्मल तथा शुद्ध हुआ तथा सारे कीड़े नष्ट हो गए। आश्चर्य से दंग हुए शिष्य आगे बढ़े और उन्होंने पानी पी लिया। शाम होती देखकर सतगुरु महाराज सभी शिष्यों को साथ लेकर मार्ग से भजन करते हुए मठ वापस लौटे।

अब इस कथा का लक्ष्यार्थ सुनिए। सारे पच्चीस तत्वों (इनका विवरण इस से पूर्व किया गया है) को सभी शिष्य समझें, वे सभी मिलकर छब्बीसवाँ तत्व, जो स्वयं सतगुरुजी हैं, उनके आगे सामने खेलते हैं। फेरे

बनाकर खेलते समय, वस्तुत: वे जन्म-मृत्यु के फेरे लगाते रहते हैं, सतगुरुजी अस्तित्व रूप से वह खेल देखते रहते हैं; खेलकर वे बहुत थक जाते हैं। उसके उपरांत सतगुरुजी ने सारे सद्‌गुणों को मिलाकर उसका मिश्रण बनाकर, जिसे सांसारिक रोग का भयंकर कुष्ठ हुआ है, उसे खिलाकर उसका उद्धार किया। सतगुरुजी की सेवा करने से शिष्यों के मन में मोक्ष प्राप्ति की इच्छा उत्पन्न हो गयी, यानी ऊपर दिए गए बयान के अनुसार उन्हें प्यास लगी। उस समय सतगुरुजी ने उन्हें पास ही में जल रूपी अमृत दिखा दिया। जैसे पानी पिने से प्यास बुझती है, उसी प्रकार अमृत प्राशन करने से मोक्ष प्राप्ति (अमृत पिने से अमरत्व प्राप्त होता है, यानी मनुष्य जन्म-मृत्यु के फेरे से बाहर हो जाता है, अर्थात मोक्ष प्राप्त करता है) होती है, परंतु उपासना (साधना) करते समय विविध प्रकार के जो दुख तथा कष्ट सहने पड़ते हैं, अमृत में पड़े हुए उन दुख कष्ट रूपी कीड़ों को देखकर, भयभीत हुए शिष्य अमृत पी न सके। उसपर स्वयं सतगुरुजी ने दुख स्वीकार करके, मोक्ष धाम ले जाने वाली उपासना दुखरहित की। उसके पश्चात सभी अमृत प्राशन करके मुक्ति रूपी तृप्ति प्राप्त कर पाए। यह अध्याय सर्वोत्तम होकर, इसे श्रवण करने से जल्द ही सद्‌गति प्राप्त होती है, क्योंकि सिद्धारूढ़जी का अवतार यह परमानंदका उद्‌गम स्थान है। जो श्रद्धालु भक्त इस मृत्युलोक तथा परलोक में जो भी मनोकामनाएँ करेंगे, वे सारी मनोकामनाएँ इस अध्याय के सुनने से सतगुरु कृपा से पूर्ण होंगी। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह चौवनवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥